स्त्री आंदोलन की सूत्रधार पत्रिका : 'स्त्री दर्पण'

डॉ0 प्रज्ञा पाठक,

एसोसिएट प्रोफेसर–हिन्दी,
एन. ए. एस कॉलेज, मेरठ,उ.प्र.

शोध सारांश

'स्त्री दर्पण' बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में हिंदी क्षेत्र में होने वाले स्त्री आंदोलन को नेतृत्व देने वाली पत्रिका है। इसके माध्यम से भारतीय स्त्री विमर्श के इतिहास को जाना और समझा जा सकता है। औपनिवेशिक भारत में भारतीय सामाजिक–राजनीतिक आंदोलन के समकक्ष एक स्त्री आंदोलन भी खड़ा हुआ, यह इस पत्रिका के माध्यम से जाना जा सकता है। स्त्रियों के लेखन और चिंतन के बारे में इतिहास और आलोचना का रवैया कतई संवेदनशील नहीं कहा जा सकता। स्त्री दर्पण और उस समय की अन्य पत्रिकाएं हमारे चिंतन को नई दिशा देने में समर्थ हैं। इस लेख के माध्यम से स्त्री दर्पण पत्रिका के महत्व को सामने लाने का प्रयास किया गया है।

बीज शब्द – *स्त्री दर्पण, स्त्री आंदोलन, स्त्री केंद्रित पत्रिकाएँ, स्त्री लेखन का इतिहास।*

विचार की दुनिया में स्त्री के सार्थक हस्तक्षेप का नाम है 'स्त्री दर्पण'। इस हस्तक्षेप का महत्व समय सापेक्ष है। हिंदी में लेखिकाओं की मुखर उपस्थिति का समय आमतौर पर 1970 के आसपास का माना जाता है। 1990 से स्त्री लेखन की दुनिया में एक बड़े परिवर्तन की भूमिका लिखी जाती है। यह समय 'स्त्री विमर्श' के लिए जाना जाता है। स्त्री के अस्तित्व, उसकी अस्मिता और उसके अधिकारों के प्रश्न पर साहित्य की दुनिया में विचार–विमर्श का सिलसिला चल पड़ा है। यदि स्त्री लेखन के इतिहास को खोजने चलें तो भक्ति काल में मीरा और आधुनिक काल में महादेवी (इन दोनों के नाम और काम से हिंदी समाज का परिचय है) के लेखन को हिंदी साहित्य के इतिहास में स्त्री के अधिकारों की आवाज की तरह नहीं सुना गया। यह भी कहा जा सकता है कि लंबे समय तक उनकी आवाज और उपस्थिति 'आध्यात्म' और 'रहस्यवाद' के दायरों में कैद रही। जाहिर है यह पितृसत्तात्मक व्यवस्था के लिए सुविधाजनक था। समय के बदलाव के साथ आलोचना और इतिहास में स्त्रियों की सक्रियता और पुरुषों की मानसिकता में परिवर्तन के कारण मीरा और महादेवी की आवाज विद्रोह के स्वरों के रूप में पहचानी गई। यहाँ आपका ध्यान बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ के तीन अथवा चार दशकों के उस समय की ओर आकर्षित करना चाहती हूं जो साहित्य में स्त्रियों की अनुपस्थिति के लिए जाना जाता है– बंग महिला, सुभद्रा कुमारी चौहान और महादेवी की उपस्थिति अपवाद की तरह ही जानी जाती है। वास्तविकता यह है कि इस दौर में हिंदी में एक स्त्री आंदोलन पूरी तेजस्विता के साथ खड़ा हुआ था जिसके केंद्र में 'स्त्री दर्पण' नामक पत्रिका थी।

भारतीय नवजागरण और भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में जन चेतना के निर्माण में पत्र–पत्रिकाओं की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण रही

है। इनमें से कुछ का बड़ा नाम हुआ उनको व्यापक पहचान मिली और कुछ उपेक्षित और अनजानी सी रह गईं। साहित्य और पत्रकारिता के इतिहास में लगभग अनजानी और उपेक्षित सी पत्रिका है 'स्त्री दर्पण'। यह बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में हिंदी क्षेत्र में होने वाले स्त्री आंदोलन को नेतृत्व देने वाली पत्रिका है। इसके माध्यम से भारतीय स्त्री विमर्श के इतिहास को जाना और समझा जा सकता है। भारतीय सामाजिक–राजनीतिक आंदोलन के समकक्ष एक स्त्री आंदोलन भी खड़ा हुआ, यह इस पत्रिका के माध्यम से जाना जा सकता है। स्त्रियों के लेखन और चिंतन के बारे में जानकारी और सहिष्णुता दोनों के अभाव के कारण यह शब्द 'स्त्री आंदोलन' बहुत सारे लोगों को चौंकाता है। पर 'स्त्री दर्पण' और उस समय की अन्य पत्रिकाएं हमारे चिंतन को नई दिशा देने में समर्थ हैं।

इस पत्रिका के माध्यम से हम भारतीय समाज को एक नया आकार लेते देखते हैं। जहां सामाजिक रूढ़ियों से उद्धार की कामना लिए हुए पुरुष का मुंह देखने वाली स्त्री के बजाय हमें सजग और आत्मचेतस स्त्रियां दिखाई देती हैं जो न केवल स्त्रियों की समस्याओं को स्वयं स्त्रियों की दृष्टि से उठाती हैं बल्कि उनके निराकरण को लेकर होने वाली देशव्यापी बहसों में बढ़–चढ़कर भाग भी लेती हैं। अपने अस्तित्व और व्यक्तित्व के प्रति जागरूक होकर बीसवीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में स्त्री की आर्थिक आत्मनिर्भरता की बातें करती हैं।

स्त्री दर्पण पत्रिका का प्रकाशन सन् 1909 ई0 में प्रयाग से शुरू हुआ था और सन् 1929 ई0 तक इसका प्रकाशन हुआ था। इसकी सम्पादिका रामेश्वरी देवी नेहरू थीं। स्त्री केंद्रित पत्रिकाएं तो और भी निकल रहीं थीं – गृह लक्ष्मी, आर्य महिला, स्त्री धर्म शिक्षक इत्यादि। लेकिन इस आंदोलन को नेतृत्व देने का गौरव 'स्त्री दर्पण' को प्राप्त है। पत्रिका के बारे में रामेश्वरी नेहरू का कहना है –''भारतीय स्त्री को मनुष्योचित पद दिलाना शुरु दिन से इस पत्रिका का लक्ष्य रहा है''[1] । इस लक्ष्य की प्राप्ति के दो रास्ते बताए गए – एक तो स्त्रियों के प्रति पुरुषों के विचारों में परिवर्तन से और दूसरा स्वयं स्त्री जाति की जागृति से । स्त्री के कर्तव्य और 'स्त्री दर्पण' की प्रतिबद्धता का समायोजन कुछ इस प्रकार से हुआ है–

''पुत्री, पत्नी, माता के रूप में स्त्री का कर्तव्य केवल दासी बनकर आज्ञा पालन करना ही नहीं है, न उसके कर्तव्यों की सीमा पिता, पति, पुत्रादि को भोजनादि से संतुष्ट रखकर ही होती है। स्त्री का सबसे बड़ा कर्तव्य हर अवस्था में पुरुष की प्रत्येक कार्य में सहायता करने का है। स्त्री पुरुषों को मिलाकर ही संसार की सृष्टि बनती है। सांसारिक कल्याण के लिए भी यह अभीष्ट है कि संसार के प्रत्येक काम को स्त्री पुरुष मिलकर करें यही विचार स्त्री पुरुषों के मनों में अंकित करने का दर्पण प्रयत्न कर रहा है''[2]।

स्त्री को मनुष्योचित पद दिलाने का संकल्प लेकर चलने वाली हिंदी क्षेत्र की यह पहली और अकेली पत्रिका है। 5 सितंबर 1995 ई0 को चीन के बीजिंग शहर में हुए चौथे संयुक्त राष्ट्र विश्व महिला महासम्मेलन में सूत्र वाक्य की तरह यह कथन प्रचलित हुआ – 'जो मानवाधिकार हैं वही स्त्रियों के अधिकार हैं'। इस आवाज को दुनिया ने सुना । लेकिन स्त्री को मनुष्योचित पद दिलाने का संकल्प लेकर चलने वाली 'स्त्री दर्पण' पत्रिका 'गुमनाम' और स्त्रियों के अधिकारों के लिए संघर्ष करने वाली उसकी आवाज 'अनसुनी' है।

तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियों में स्त्री की स्थिति और उसके योगदान पर चर्चा करने के साथ ही स्त्री दर्पण में स्त्रियों को भविष्य के प्रति सतर्क और जागरूक दृष्टि देने का भी प्रयास किया है। भारतीय स्त्री के पतिव्रत, उसके धर्म, संस्कार, परंपराओं इत्यादि

को लेकर समाज ने उसके इर्द–गिर्द एक ऐसी लक्ष्मण रेखा खींच रखी थी जिसका उल्लंघन करना आसान नहीं था। स्त्री दर्पण के द्वारा परंपराओं और भारतीय संस्कृति का सम्मान करते हुए भी ऐसे मूल्यों और आदर्शों को बार–बार चुनौती दी गई है जो अर्थहीन हैं और स्त्री–समाज के व्यापक हितों की पूर्ति नहीं करते हैं।

तत्कालीन समाज बड़े उलटफेर के दौर से गुजर रहा था। चाँद पत्रिका के नारी आंदोलन अंक (नवम्बर,1934) के संपादकीय में कहा गया– ''जिस युग में हम जीवन व्यतीत कर रहे हैं वह बड़ा ही आश्चर्यजनक है। यदि इसे चमत्कार युग कहा जाए तो कुछ भी अनुचित नहीं है। यह ऐसे क्रांतिकारी परिवर्तनों का समय है जिन पर सहसा विश्वास नहीं होता। जो प्रथाएं सैकड़ों वर्षों से चली आई हैं और जिनको लोग अजर–अमर समझते हैं, वे इस समय बालू की भीत की तरह ढहती नजर आती हैं। जिन सिद्धांतों और नियमों को धर्म का आधार समझा जाता है, वे लोगों के द्वारा ठुकराए जाते दिखलाई पड़ते हैं। इतना ही क्यों इस काल में ज्ञान, विज्ञान, शिक्षा, कला, व्यवसाय, राजनीति सभी विषयों के सिद्धांतों में तीव्र वेग से उलटफेर हो रहा है और उनका स्वरूप सर्वथा बदलता जाता है''।[3] बीसवीं शताब्दी की स्त्रियों की सामाजिक स्थिति की पड़ताल करते हुए चांद का यह नारी आंदोलन अंक स्त्री की बदलती हुई सामाजिक स्थिति की गवाही स्वयं देता है। ''इस सच्चाई को स्वीकार करने में हमारे ख्याल से किसी को आपत्ति नहीं हो सकती कि इस समय सारे संसार के चमकते हुए आंदोलनों में मजदूर आंदोलन के पश्चात नारी आंदोलन का ही नंबर है''[4]।

तत्कालीन सामाजिक समस्याओं में अधिकांश का सम्बंध स्त्रियों से हैं। स्त्री शिक्षा, बाल विवाह, मृत स्त्री का विवाह, सती प्रथा और परदा इत्यादि पर स्त्रियों ने लिखा और इन पर खूब वाद–विवाद हुआ। स्त्री शिक्षा के संदर्भ में समाज का बड़ा वर्ग भ्रमित था। उससे संवाद बनाने के प्रयास भी हुए और उसकी चेतना को झकझोरने का काम भी किया गया। विस्तार में न जाते हुए स्त्री शिक्षा पर स्त्री दर्पण से दो उदाहरण पत्रिका के तेवर की बानगी को –

'इस मत के लोगों के विचार में स्त्री का कर्म–क्षेत्र रसोईघर से आगे बढ़कर ड्राइंग रूम तक आया है। वे कहते हैं स्त्री को उतनी ही शिक्षा देनी उचित है जितनी उनके ड्राइंग रूम की शोभा बढ़ाने के लिए आवश्यक है। परंतु बहिनों, क्या हमारी ज्ञान–पिपासा को बुझाने के लिए, क्या हमारी बढ़ती हुई आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए यह काफी है' अन्नपूर्णा के रूप में, लक्ष्मी के रूप में बहुत काल तक हम रसोई घर और ड्राइंग रूम की शोभा बढ़ाती रहीं। अब सरस्वती के रूप में मानसिक संसार पर भी हमारा राज्य होना उचित है। जहां कहीं जाओ स्त्री उपयोगी शिक्षा की चर्चा सुनाई देती है परंतु पुरुषोपयोगी शिक्षा की चर्चा कहीं नहीं सुनाई देती। यह ठीक है कि बिना किसी विशेष लक्ष्य के शिक्षा देना व्यर्थ है, और प्रत्येक स्त्री पुरुष को जो कुछ अपने जीवन में करना हो उसी के अनुकूल और उसी के अनुसार शिक्षा मिलनी चाहिए। परंतु स्त्री को अपने जीवन में क्या–क्या करना चाहिए इसके निश्चित करने में मतभेद है''[5]।

इसी लेख में स्त्री शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य पर चर्चा करते हुए श्रीमती रामेश्वरी नेहरू लिखती हैं ''स्त्री की शिक्षा इन लक्ष्यों को सामने रखकर होनी चाहिए– प्रथम मनुष्य व द्वितीय स्त्रीत्व। स्त्री केवल स्त्री ही नहीं है, वह स्त्री होने से पूर्व मनुष्य है। अर्थात मानव समाज का एक अंग है। इसलिए उसकी शिक्षा उसके इस पद के उपयुक्त होनी चाहिए। बालपन से उसके सिर में यह भरने के बदले कि वह स्त्री है, इस बात का उद्योग होना चाहिए कि वह इस बात को भूल जाए कि वह स्त्री है, और केवल इसी बात को

याद रखे कि वह मनुष्य है– मानव समाज का एक अंग है। उसमें इस बात की शक्ति पैदा करनी चाहिए कि वह अपने इस पद को स्वतंत्र रूप से निभा सके– अपने देश, अपने समाज, समस्त संसार के प्रति जो मनुष्य का कर्तव्य है उसका पूर्ण रुप से पालन कर सके– समाज पर एक भार स्वरूप होकर उसको नीचे गिराने वाली नहीं, परंतु उसको ऊपर उठाने वाली बने''[6]। स्त्री शिक्षा की अवधारणा का विकास, मनुष्य और स्त्रीत्व को केंद्र में रखकर हो, यह परिकल्पना स्वयं एक स्त्री कर रही थी। अपने ऊपर दैवीय गुणों का आरोपण करके एक निष्क्रिय सामाजिक जीवन जीने को बीसवीं सदी की यह स्त्री तैयार नहीं थी। वह मनुष्य के रूप में समाज में जीने का अधिकार और सामाजिक उत्तरदायित्व में अपनी भागीदारी चाहती थी।

स्त्री दर्पण ने समूचे राजनीतिक परिदृश्य से महिलाओं का परिचय कराने और उन्हें अपनी भूमिका के प्रति जागरूक बनाने का काम भी बखूबी किया था। इस पत्रिका में जहां किसी लेखक ने अपना मत व्यक्त किया कि स्त्रियों को कानून बनाकर राजनीति में आने से रोकना चाहिए। वहीं 'क्या स्त्रियां योद्धा बन सकती हैं' जैसे लेख के माध्यम से उन्हें अपने देश के लिए लड़ने की प्रेरणा दी गई। उस समय के तमाम राजनीतिक संगठनों की कार्यप्रणाली और उनके कार्यक्रमों की ही नहीं बल्कि छोटे बड़े व्यक्तिगत प्रयासों की भी जानकारी स्त्री दर्पण के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। स्त्री दर्पण ने राजनीतिक जागृति की भूमिका ही नहीं तैयार की उन्हें उनके आंदोलनों के पल–पल से अवगत भी कराया।

'विचार' स्त्री दर्पण की ताकत है। स्त्रियों के अधिकारों की लड़ाई का एक पूरा वृत्त था। जो प्रश्न 'स्त्री दर्पण' में उठाए जाते थे उन पर 'गृह लक्ष्मी' पत्रिका में भी बहस हो जाया करती थी। उस दौरान 'मर्यादा' पत्रिका के दो अंक बतौर नारी अंक प्रकाशित हुए। जिनकी संपादक उमा नेहरू थीं और इन दोनों ही अंको में सिर्फ स्त्रियों के लेख प्रकाशित हुए। स्त्री आंदोलन से संबंधित मुद्दों पर स्त्री दर्पण में खूब चर्चा हुई। यह स्त्री विमर्श स्त्री की स्वाधीनता और उसकी पराधीनता को ठीक–ठीक पहचानने की कोशिश करता है। वैचारिक भिन्नताएँ यहाँ पर भी हैं पर बावजूद इसके सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों के लिए लड़ती स्त्री का भविष्य क्या होगा– यह इस स्त्री विमर्श की चिंता है। एक ऐसी स्त्री जो आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो, देशी–विदेशी के विवाद में पड़े बिना एक बेहतर मनुष्य के रूप में अपने विकास की चिंता करे, अपने अधिकारों का संरक्षण कर सके, अपने देश और समाज के लिए उपयोगी बन सके यही आदर्श इस स्त्री आंदोलन ने भारत की स्त्री को देने का प्रयास किया।

संदर्भ सूची

1. नेहरू रामेश्वरी–सम्पादकीय – स्त्री दर्पण, जुलाई 1915, पेज –1–2
2. नेहरू रामेश्वरी–सम्पादकीय – स्त्री दर्पण, जुलाई 1915, पेज – 2
3. श्रीवास्तव नवजादिक लाल, चांद पत्रिका (नारी आंदोलन अंक नवम्बर–1934, पेज –3
4. भंडारी चन्दराज–संसार का महिला आंदोलन, चांद पत्रिका (नारी आंदोलन अंक, नवम्बर–1934,पेज–36
5. नेहरू रामेश्वरी–स्त्री शिक्षा की आवश्यकता– स्त्री दर्पण, दिसम्बर 1917, पेज–312
6. नेहरू रामेश्वरी–स्त्री शिक्षा की आवश्यकता– स्त्री दर्पण, दिसम्बर 1917, पेज–312

Copyright © 2017, Dr. Pragya Pathak. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.